वक्तव्य: 03 (भाण और व्यायोग)

3.भाण :- भण् धातु से अधिकरणे घञ् प्रत्यय लगकर भाण: शब्द निष्पन्न हुआ है। इसकी व्युत्पत्ति निम्न है-

भण्यते व्योमोक्तया (आकाशभाषितेन) नायकेन स्वपरवृत्तं प्रकाश्यतेऽत्तेति भाण: ।

अर्थात भाण वह रूपक प्रकार है, जिसमें नायक आकाशभाषित के द्वारा स्ववृत्त और परवृत्त का प्रकाशन करता है।

साहित्यदर्पणकार के अनुसार-

भाण: स्याद्धूर्तचरितो नानावस्थान्तरात्मक: ॥

एकाङ्क एक एवात्र निपुण: पण्डितो विट: ।

रङ्गे प्रकाशयतेत्स्वेनानुभूतमितरेण वा ॥

संबोधनोक्तिप्रयुक्ती कुर्यादाकाशभाषितै: ।

सूचयेद्वीरश्रृङ्गारौ शौर्यसौभाग्यवर्णनै: ॥

तत्रेतिवृत्तमुत्पाद्यं वृत्ति:प्रायेण भारती

मुखनिर्वहणे सन्धी लास्याङ्गानि दशापि च ॥[7]

-अर्थात् भाण वह है, जिसमें धूर्त चरित का चित्रण हो।

-अनेकविध लोकोपयोगी व्यवहारों का उपनिबन्धन हो।

-जिसकी रचना एक अङ्क में ही सम्पूर्ण हो।

---

[7] साहित्यदर्पण, 6.227.1/2-230

-एक हि कुशल एवं बुद्धिमान नायक **विट** हो जो स्वानुभूत एवं परानुभूत विषयों का परिचय रङ्ग सामाजिकों को देता हो ।

-संबोधन के लिये आकाशभाषित का सहारा लेता है तथा उक्ति-प्रत्युक्ति के माध्यम से अपना अभिप्राय सामाजिकों को समझाता है ।

-इसमें श्रृङ्गार और वीर रस की अभिव्यञ्जना होती है, जिसके लिये विलास-वर्णन और शौर्य वर्णन अपेक्षित रहता है।

-इसका इतिवृत्त कवि-कल्पित होता है

-इसमें भारती-वृत्ति का प्रयोग होता है ।

-सन्धिपञ्चक में **मुख** और **निर्वहण** संधियों की योजना यहाँ आवश्यक है ।

-मनोरञ्जन की दृष्टि से यहाँ दसों लास्याङ्गों का उपन्यास उचित माना गया है ।

नोट :- भाण का उदाहरण –लीलामधुकरम् ।

-आकाशभाषित का तात्पर्य है किसी अन्य पात्र के न होने पर भी, विट, स्वयं ही, अन्य पात्र की उक्ति की कल्पना कर लेता है और उत्तर-प्रत्युत्तर देता है ।

-भारती-वृत्ति वाणी की प्रधानता वाली, संस्कृत पाठ से युक्त केवल पुरूष पात्रों द्वारा प्रयोज्य होती है । यह भरतों द्वारा प्रयुज्य होने के कारण भारती वृत्ति कहलाती है ।
-मुख-सन्धि से आशय उससे है, जिसमें बीजों की उत्पत्ति होती है तथा अनेक प्रकार के प्रयोजन तथा रसों की निष्पत्ति का जो निमित्त होता है ।

-जहाँ बीज से सम्बन्ध रखने वाले मुख सन्धि आदि में अपने-अपने स्थान पर बिखरे हुए प्रारम्भ आदि अर्थों का एक मुख्य प्रयोजन के साथ सम्बन्ध दिखलाया जाता है वह निर्वहण सन्धि कहलाती है ।

-लास्याङ्ग एक प्रकार के एकांकी रूपक थे,जिसमें लास्य नृत्य की प्रमुखता रहती थी । इसके 10 भेद हैं- गेयपद,स्थितपाठ्य, आसीन, पुष्पगण्डिका, परच्छेदक,त्रिगूढ, सैन्धव, द्विगूढक, उत्तमोत्तमक् तथा उक्त-प्रत्युक्त लास्य ।

4-व्यायोग :- **वि** और **आ** उपसर्गपूर्वक **युज्** धातु से **घञ्** प्रत्यय लगकर व्यायोग: शब्द बना है । इसकी निष्पत्ति है

विशेषेण आ समन्तात् युज्यन्ते कार्यार्थं संरभन्तेऽत्तेति व्यायोग:।

साहित्यदर्पणकार के अनुसार-

ख्यातेतिवृत्तो व्यायोग: स्वल्पस्त्रीजनसंयुत: ।

हीनो गर्भविमर्शाभ्यां नरैर्बभिराश्रित: ॥

एकाङ्कश्च भवेदस्त्रीनिमित्तसमरोदय: ।

कैशिकीवृत्तिरहित: प्रख्यातस्तत्र नायक: ॥

राजर्षिरथ दिव्यो वा भवेद्धीरितश्चस: ।

हास्यश्रृङ्गारशान्तेभ्य इतरेऽत्राङ्गिनो रसा: ॥[8]

-व्यायोग वह है ,जिसकी कथावस्तु प्रख्यात हो तथा स्त्रीपात्रों की संख्या बहुत कम तथा पुरूष पात्रों की संख्या अधिक हो ।

-जिसके लिये गर्भ और विमर्श सन्धियों की आवश्यकता नहीं होती तथा एक अङ्क में समाप्ति होती है ।

-इसमें ऐसे संग्राम का वर्णन होता है, जिसका कारण स्त्री न हो ।

-कैशिकी वृत्ति नहीं रहती ।

-नायक प्रसिद्ध पुरूष होता है । वह देव अथवा राजर्षि विशेष हो ।

-धीरोदात्त प्रकृति का ही नायक चित्रण होता है ।

-हास्य,श्रृङ्गार व शान्त के इतर अन्य कोई भी अङ्गी रस हो ।

नोट;-उदाहरण- मध्यमव्यायोग (भास), सौगान्धिकाहरणम् ।

[8] -साहित्यदर्पण्, 6/231-31

-बीज दृष्ट होकर पुन: नष्ट हो जाने पर जहाँ उसका बार-बार अन्वेषण हो, वह गर्भसन्धि है । यह फल होना चाहिये इस प्रकार का निश्चय कर, जिसमें गर्भ सन्धि से प्रकाशित बीज रूप अर्थ का सम्बन्ध दिखलाया जाये, वह विमर्श सन्धि है ।

-कैशिकी वृत्ति सुकुमार वेशभूषा से युक्त, स्त्रियों व नृत्य-गायन से बाहुल्य,स्त्री-पुरूषों की श्रृङ्गारिक चेष्टाओं से युक्त, श्रृङ्गार रस प्रधान होती है ।

रूपक तथा उसके भेद